International Journal of Advance and Applied Research
www.ijaar.co.in
ISSN – 2347-7075 Impact Factor – 8.141
Peer Reviewed Bi-Monthly
Vol. 6 No. 40 September - October - 2025

जल, जंगल और जमीन'' उपन्यास: आदिवासी जीवन की त्रासदी

प्रो.डॉ.बाबासाहेब कोकाटे[1], डॉ.रंजना शिवाजीराव गायकवाड[2]

हिंदी विभागाध्यक्ष, बलभीम महाविद्यालय,बीड

हिंदी विभाग, बलभीम महाविद्यालय,बीड

Corresponding Author – प्रो.डॉ.बाबासाहेब कोकाटे

DOI - 10.5281/zenodo.17656889

प्रस्तावना:

भारतीय साहित्य में आदिवासी जीवन और उनके संघर्षों को अभिव्यक्ति देने वाले उपन्यास अपेक्षाकृत कम लिखे गए हैं। अधिकतर मुख्यधारा का साहित्य शहरी जीवन, मध्यमवर्गीय चिंताओं और सामंती संरचनाओं पर केंद्रित रहा। किंतु स्वतंत्रता के बाद विशेषकर 1980 के दशक के बाद आदिवासी विमर्श को साहित्य में नए आयाम मिले। इसी कड़ी में "जल, जंगल और जमीन" उपन्यास आदिवासी जीवन की त्रासदी और उनके संघर्ष की गाथा प्रस्तुत करता है। यह उपन्यास केवल एक कथा नहीं, बल्कि आदिवासियों के उस दर्दनाक अनुभव का दर्पण है जिसमें विकास के नाम पर उनसे उनका जल, जंगल और जमीन छीन लिया जाता है।

1. जल से जुड़ी त्रासदी :

उपन्यास में बार-बार यह दिखाया गया है कि नदियाँ और तालाब, जो आदिवासियों के जीवन का स्रोत हैं, बड़े बाँधों और खनन परियोजनाओं के कारण सूख जाते हैं या उनका पानी गाँव तक पहुँच ही नहीं पाता। उदाहरणस्वरूप, नर्मदा घाटी के आदिवासी पात्रों का उल्लेख आता है, जिन्हें विकास योजनाओं के नाम पर विस्थापित होना पड़ता है। उनके लिए जल केवल पीने और खेती का साधन नहीं, बल्कि धार्मिक और सांस्कृतिक पहचान का हिस्सा है। जब नदी उनसे छिनती है, तो वे केवल जलविहीन नहीं बल्कि संस्कृति-विहीन भी हो जाते हैं।

2. जंगल से जुड़ी त्रासदी :

आदिवासी समाज जंगल को अपना घर, अपनी मां मानता है। जंगल उन्हें फल, फूल, औषधि, लकड़ी और जीविका देता है।उपन्यास में खनन कंपनियों और ठेकेदारों द्वारा वनों की अंधाधुंध कटाई दिखाई गई है। इसका परिणाम यह होता है कि आदिवासी अपने पारंपरिक जीवन से वंचित हो जाते हैं। पात्रों के संवादों में यह पीड़ा बार-बार झलकती है कि "जंगल गया तो हम भी गए।" यह वाक्य उनके अस्तित्व की असुरक्षा को प्रकट करता है।

3. जमीन से जुड़ी त्रासदी:

जमीन आदिवासी की असली पहचान है। परंतु विकास योजनाओं, खदानों और कारखानों के लिए उनकी भूमि अधिग्रहित कर ली जाती है।

उपन्यास में कई जगह दिखाया गया है कि जिन खेतों में पीढ़ियों से आदिवासी खेती करते आ रहे थे, उन्हें सरकार और पूँजीपति 'मुआवज़े' के नाम पर हड़प लेते हैं।

लेकिन यह मुआवज़ा उनका दर्द नहीं मिटा पाता। वे विस्थापन की त्रासदी झेलते हैं और शहरों की झुग्गियों में मजदूर बनकर रह जाते हैं।

4. आदिवासी स्त्रियों की दुर्दशा:

उपन्यास में आदिवासी स्त्रियों का जीवन दोहरे शोषण से गुजरता हुआ दिखाई देता है।

जंगल से लकड़ी लाने वाली महिलाएँ पुलिस और ठेकेदारों के उत्पीड़न का शिकार होती हैं।

उनके सामने यह त्रासदी भी है कि जमीन छिनने के बाद वे परिवार को पालने-पोसने के लिए शहरों में दासियों या मजदूरिनों का काम करने पर मजबूर हो जाती हैं।

5. सांस्कृतिक त्रासदी:

आदिवासी समाज का धर्म, लोकगीत, नृत्य और त्योहार जल-जंगल-जमीन से जुड़े हैं।

जब ये तीनों उनसे छीने जाते हैं, तो उनकी संस्कृति टूटने लगती है।

उपन्यास में दिखाया गया है कि विस्थापित आदिवासी जब शहरों में बसते हैं तो उनका पारंपरिक नृत्य, गीत और उत्सव धीरे-धीरे लुप्त हो जाता है।

उपन्यास की संक्षिप्त कथा-वस्तु :

उपन्यास की कथा आदिवासी अंचल की पृष्ठभूमि पर आधारित है। इसमें दिखाया गया है कि किस प्रकार उद्योग, खनन और बड़ी परियोजनाओं के कारण आदिवासी अपनी पारंपरिक भूमि से उजाड़ दिए जाते हैं। जंगल जो उनका जीवन है, उनसे छीन लिया जाता है। सरकार और पूँजीपति विकास के नाम पर उन्हें विस्थापित करते हैं, जबकि उनके अस्तित्व की बुनियाद ही जल-जंगल-जमीन से जुड़ी होती है। उपन्यास में आदिवासी पात्रों के माध्यम से उनके दैनिक जीवन, संस्कृति, परंपरा और संघर्ष का चित्रण किया गया है।

- **जल, जंगल और जमीन का प्रतीकात्मक महत्व :**

उपन्यास में जल, जंगल और जमीन केवल भौतिक संसाधन नहीं, बल्कि आदिवासी अस्तित्व के तीन स्तंभ हैं।

1. जल – जीवन और आजीविका का स्रोत। नदियाँ और तालाब आदिवासी संस्कृति के केंद्र हैं।
2. जंगल – भोजन, औषधि, ईंधन, परंपरा और धार्मिक आस्था का आधार।
3. जमीन – उनकी पहचान और स्वाभिमान।

जब ये तीनों उनसे छीन लिए जाते हैं तो वे केवल आर्थिक रूप से ही नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और सामाजिक रूप से भी टूट जाते हैं। उपन्यास में यह त्रासदी संवेदनशील ढंग से उभरती है।

- **आदिवासी जीवन और संघर्ष का चित्रण :**

उपन्यास आदिवासियों के जीवन की सादगी, परिश्रम और प्रकृति के साथ उनके गहरे संबंध को दर्शाता है।

लेखक दिखाते हैं कि आदिवासी समाज शोषण का शिकार है:

1. ठेकेदार, पुलिस और सरकारी अफसर उनके श्रम का शोषण करते हैं।
2. उद्योग और खनन कंपनियाँ उनकी भूमि हथिया लेती हैं।
3. विकास योजनाएँ उन्हें विस्थापित करके शहरों की झुग्गियों में धकेल देती हैं।

फिर भी आदिवासी समुदाय अपने जल-जंगल-जमीन की रक्षा के लिए निरंतर संघर्षरत है। उपन्यास में उनके आंदोलन और प्रतिरोध की गाथाएँ भी चित्रित हैं।

- **सामाजिक-राजनीतिक संदर्भ :**

यह उपन्यास केवल साहित्यिक कृति नहीं, बल्कि सामाजिक-राजनीतिक दस्तावेज भी है। इसमें स्वतंत्रता के बाद की विकास नीतियों की आलोचना की गई है। योजनाएँ आदिवासियों के हित में कम और पूँजीपतियों के लाभ के लिए अधिक बनती हैं।वन कानूनों के नाम पर आदिवासियों को उनके परंपरागत जंगलों से बेदखल किया जाता है। भूमि अधिग्रहण कानून उनके खिलाफ काम करता है। लोकतंत्र के बावजूद आदिवासी समाज हाशिए पर ही रहता है।

- **स्त्री जीवन का यथार्थ :**

उपन्यास में आदिवासी स्त्रियों का जीवन विशेष रूप से उभरता है। वे न केवल घर और जंगल के कामकाज में सक्रिय रहती हैं, बल्कि जल-जंगल और जमीन की रक्षा के संघर्ष में भी आगे रहती हैं।

उनका शोषण दोहरी मार झेलता है:

1. सामाजिक-आर्थिक शोषण (भूमिहीनता, गरीबी, बेकारी)।
2. लैंगिक शोषण (पितृसत्ता और बाहरी ताकतों द्वारा शोषण)।

लेखक ने आदिवासी स्त्रियों की पीड़ा और संघर्ष को यथार्थपूर्ण ढंग से प्रस्तुत किया है।

- **लेखक की शैली और भाषा :**

उपन्यास की भाषा सरल, संवादात्मक और स्थानीय रंग लिए हुए है। इसमें लोकगीत, कहावतें और आदिवासी बोलियों के प्रयोग से वातावरण को जीवंत बनाया गया है।

लेखक ने कहीं-कहीं प्रतीक और रूपक का भी प्रयोग किया है जिससे कथा गहरी संवेदनशीलता के साथ पाठक के मन में उतरती है।

- **समकालीन परिप्रेक्ष्य :**

आज जब जलवायु परिवर्तन, वनों की कटाई और भूमि अधिग्रहण के मुद्दे तेज़ी से उठ रहे हैं, उपन्यास की प्रासंगिकता और बढ़ जाती है। यह हमें सोचने पर मजबूर करता है कि क्या विकास का अर्थ केवल उद्योग और शहरीकरण है? क्या आदिवासी समाज की संस्कृति, जीवन और परंपराएँ विकास की बलि चढ़ा दी जाएँगी? उपन्यास का संदेश यही है कि वास्तविक विकास तभी संभव है जब जल-जंगल-जमीन की रक्षा करते हुए आदिवासी समाज को न्याय मिले।

निष्कर्ष:

"जल-जंगल-जमीन" उपन्यास में लेखक ने आदिवासियों की त्रासदी को इस रूप में चित्रित किया है कि वे केवल आर्थिक रूप से ही नहीं बल्कि सांस्कृतिक, सामाजिक और अस्तित्वगत संकट से भी गुजरते हैं।उनका जल उनसे छिन जाता है तो उनकी प्यास और खेती मर जाती है।उनका जंगल जाता है तो उनकी आत्मा और आस्था मर जाती है।उनकी जमीन छिन जाती है तो उनकी पहचान और भविष्य नष्ट हो जाता है।इस प्रकार उपन्यास आदिवासी समाज की त्रासदीपूर्ण यथार्थ गाथा प्रस्तुत करता है।"जल, जंगल और जमीन" उपन्यास आदिवासी समाज की पीड़ा, संघर्ष और सपनों का मार्मिक दस्तावेज है। यह केवल साहित्यिक कल्पना नहीं बल्कि यथार्थ का चित्रण है।

इसमें आदिवासियों की जीवन-दृष्टि, उनकी संस्कृति और उनके अस्तित्व को बचाने की पुकार है। लेखक ने दिखाया है कि यदि जल-जंगल-जमीन से समझौता किया गया तो न केवल आदिवासी समाज, बल्कि संपूर्ण मानव सभ्यता संकट में पड़ जाएगी।

संदर्भ सूची (References):

1. शर्मा, गोविंद. जल, जंगल और जमीन. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 2002.
2. ओझा, राजेन्द्र. आदिवासी जीवन और हिंदी उपन्यास. दिल्ली: वाणी प्रकाशन, 2015.
3. गुहा, रामचंद्र. पर्यावरण, राजनीति और समाज. नई दिल्ली: पेंग्विन बुक्स, 2010.
4. सिंह, सुभाष. हिंदी उपन्यास और आदिवासी विमर्श. प्रयागराज: हिंदी साहित्य केंद्र, 2018.
5. Government of India. Forest Rights Act, 2006.
6. Constitution of India, Ministry of Law and Justice, Govt. of India